ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-9* December-2020
Anthology : The Research

संगीत रत्नाकर में दर्शन

Darshan in Sangeet Ratnakar

Paper Submission: 10/12/2020, Date of Acceptance: 23/12/2020, Date of Publication: 24/12/2020

महेश चन्द्र पाण्डे
सहायक प्राध्यापक,
संगीत विभाग,
एम० बी० राजकीय
स्नातकोत्तर महाविद्यालय
हल्द्वानी उत्तराखण्ड, भारत

सारांश

संगीत का आधारभूत तत्व नाद है। जो सम्पूर्ण जगत में व्याप्त है व सृष्टि का कारण है इसीलिए नाद को नाद ब्रह्म कह कर उपास्य तत्व व उपासना का साधन स्वीकार किया गया है। इस नाद के संबंध, मे नकारं प्राणमामानं दकारमनलं बिटुः। जातः प्राणग्रिसंयोगातेन तादोभिधीयेत।।

अर्थात 'नकार' प्राण–वाचक तथा द्कार अग्निवाहक है। अतः जो वायु और अग्नि के योग से उत्पन्न होता है, उसी को नाद कहते हैं। ना का संबंध ध्वनि से याने आवाज से है। स्वर को ब्रह्म की उपासना के समान साध्य मानकर स्वरों के ऋषि देवता आदि का भी निरूपण किया गया। स्वर के आधरभूत तत्व नाद को उपास्य तत्व व उपसना का साधन स्वीकार करके वेद, तन्त्रशास्त्र, उपनिषदों आदि में ना की अपार महिमा गाई गई है, जिसमें शब्द, वाक्, प्रणव, ओंकार, साम, तथा उद्गीथ आदि के माध्यम से संगीत के आध्यात्मिक व दार्शनिक पक्ष की विशद व्याख्या तथा उसकी महता को प्रतिपादन किया गया है। नाद पर ध्यान केन्द्रित करना अति कठिन है जिसके लिए चित्र वृत्तियों को वश में करना या उनको निरोध करना आवश्यक है। इसी दृष्टि से दर्शन के योगदर्शन में अष्ट योगांगो का निर्देश किया है। जिससे हेतु चित को एकाग्र करने व इच्छाओं को दमन करने की शक्ति योगी में उत्पन्न होती है। यह साम्य संगीत के नाद में दिखाई देता है।

The basic element of music is sound. Which is prevalent in the whole world and is the cause of the world, that is why Naad has been accepted as Naad Brahm and the worshiper element and means of worship. In relation to this sound, I do not deny the life Jātā Pranāgrisamayogaten Tādobhidhyadeetha.

That is, 'nakara' is the person who reads life and the fire is the fire. Therefore, what is produced by the combination of air and fire is called Naad. Na is related to sound. The sage deity of the vowels was also represented by considering the vowels as being practicable like the worship of Brahma. By accepting the base element of voice, nad, the worship element and means of worship, the immense glory of Na has been sung in the Vedas, Tantrashastra, Upanishads, etc., in which the spiritual and musical aspects of music through words, speech, pranava, onkar, sam, and udgith etc. A philosophical explanation of the philosophical aspect and its importance has been given. It is very difficult to concentrate on the sound, for which it is necessary to subdue the pictures or curb them. With this view, Ashta yogangos have been instructed in the philosophy of philosophy. For this reason, the power to concentrate the mind and suppress desires is generated in the yogi. This is reflected in the sound of communion music.

मुख्य शब्द : दर्शन, नाद, ब्रह्म, मोक्ष, नादोत्पत्ति, चक्र, ब्रह्मगन्थि, योग।
Darshan, Nad, Brahma, Moksha, Nadottatti, Chakra, Brahma Granthi, Yoga.

प्रस्तावना

संगीत–रत्नाकर भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्राचीन ग्राम–मूर्च्छना प्रणाली से सम्बन्धित संगीत विद्या का प्रतिपादक अन्तिम आधार ग्रन्थ है। इसके रचयिता आचार्य शारंगदेव हैं। इसका रचनाकाल सन् 1210 से 1247 ई0 का मध्य है। शारंगदेव के पूर्वज काश्मीर के मूल निवासी थे जो कालान्तर में आव्रजन द्वारा जैत्रपद (दक्षिण भारत) में बस गए। जैत्रपद के राजा सिधण के संरक्षण में इन्हें संगीत–विद्या को पुष्पित–पल्लवित करने का अनुकूल वातावरण प्राप्त हुआ। संगीत रत्नाकर इस अद्वितीय कृति में इनके पूर्व आचार्य मतगंमुनी

(ईसा 600–800) और अभिनवगुप्पादाचार्य (ईसा 140–1024) द्वारा प्रतिपादित योग और आध्यात्म का समुचा प्रभाव दिखता है।

भारतीय संस्कृति, साहित्य एवं संगीत पर चिरकाल से विदेशी आक्रमणकारियों के प्रहार होते रहे हैं, परन्तु भारत की जलवायु में विपरीत परिस्थितियों से तालमेल करते हुए सुर–ताल का साम्राज्य स्थापित करके अपने मूल स्वरुप को विद्यमान रखने की अभूतपूर्व क्षमता है। इस परिप्रेक्ष्य में जब भारतीय–संस्कृति एवं संगीत पर विदेशियों का आक्रमण हो रहा था उस समय संगीत, साहित्य एवं संस्कृति को बचाने के लिए लक्षण एवं आधार–ग्रन्थों की रचनाएँ हुई, जिनमें संगीत के क्षेत्र में 'संगीत रत्नाकर' का स्थान सर्वोपरि है।

संगीत रत्नाकर के मंगलाचरण पर शैवदर्शन एवं योग का प्रभाव

वैदिक साहित्य में मानव कृतित्व से संपन्न होने वाली प्रत्येक स्पंद को कला कहा गया है व चौसठ कलाओं को निर्देष दिया गया है। ललित कलाओं में लालित्य एवं परतत्वविषयक सामग्री निहित होने के कारण इन्हें स्वतंत्रय कलाएं माना गया। संगीत को इन कलाओं में सर्वश्रेष्ठ माना गया।

वैदिक परम्परा के अनुयायी अद्वैत वेदान्तियों ने शिव की उत्पादन चेतनसत्ता के 'ब्रह्म' के नाम से कहा है, उसी प्रकार संगीत रत्नाकर में 'नाद' को 'ब्रह्म' के नाम से कहा है। [1]

ब्रह्म और नाद की व्यापकता जगत् का कारण और जगत् का नादधीन होना है। जगत् को 'चैतन्य' ही नादब्रह्म है। [2]

पं. शारंगदेव अपने आराध्य देव योगीश्वर शिव जी को वन्दना करते हुए ही आरंभ में तथा मध्य व अन्त में भी मंगलाचरण किया है। उसी का यह दृष्ट फल है कि उनके इस रत्नाकर ग्रन्थ ने सम्पूर्ण विश्व में अजरामर प्रसिद्वि प्राप्त कर ली। मंगलाचरण पद्य इस प्रकार है।

ब्रह्मग्रन्थिजमारूतानुगतिना चितेन हृत्पंकजे।
यस्माद्ग्रामविभागवर्णरचनालंकार जातिक्रमो।
सूरीणामनुरंज्जकः श्रुतिपदं योळयं स्वयंराजते।।
वन्दे नादतनुं तमुद्वुरजगद्गीतं मूदे शंकरम्।।1।।

प्रस्तुत अर्थ– ब्रह्मग्रन्थि से उठने वाली वायु के साथ चलने वाले मन के द्वारा, प्रणव के 'वाचक' ओंकार पद के श्रवण के पश्चात्, श्रुतियों का जो आश्रयस्थान है, जो योगियों के हृदय–कमल में रंजक रूप से स्वयं प्रकाशित होता है, जिससे ग्राम, वर्ण, जातियॉ सुव्यवस्थित रूप से निर्मित होती हैं तथा नाद–अथवा आकाश ही जिसका शरीर है और जगत् जिसे उत्कट होकर, परमानंद प्राप्ति के लिए गाता है, उस शंकर भगवान को मेरा प्रणाम।

अर्थात् इस मंगलाचरण पद्य में क्लिष्ट पदों द्वारा संगीत और योग के दृष्टि से एक ही शब्द का प्रयोग करके संगीत साधना ही योग साधना है तथा समान रूप से मोक्ष का साधन है यह गर्भित अर्थ प्रतिपादित किया है देखिए– संगीत के पक्ष में इस मंगलाचरण का अर्थ इस प्रकार होता है–गायकों के हृदयरूप मन्द्रस्थान में ब्रह्मग्रन्थि से उठने वाली वायु की गति के साथ चलने वाले चित्र के द्वारा रंजकता के कारण जो स्वयं प्रकाशित होता है, जिससे मूर्च्छनादि को आश्रयभूत–ग्राम, षड्जमध्यमादि ग्रामविभाजन, स्थायी आदि वर्ण, उनका विनियोग, प्रसन्नादि अलंकार, षाड्जी आदि जातियॉ और उनकी सुव्यवस्था हो पाती है, जो नादस्वरूप शरीर का धारण करता है और जिसके द्वारा जगत् का उत्कठता से बोध होता है अथवा जगत् में जो उत्कटतया गाया जाता है, उस–स्वय–सन्दर्भ–रूप गीतं को मैं प्रणाम करता हूॅ अर्थात् स्तुति करता हूॅ। योगियों के हृदय में जिस प्रकार 'ब्रह्म' स्वयं प्रकाशित होता है उसी प्रकार 'गीत' भी गीतज्ञों के हृदय मे स्वयं प्रकट होता है। 'ब्रह्म' जैसे श्रुतियों का आश्रय का है, वैसे ही 'गीत' भी छंदोवती आदि श्रुतियों का आश्रय है। इस प्रकार मंगलाचरण का प्रत्येक पद अन्वर्थक और 'ईश्वर' और 'नाद' के पक्षों में संगति दिखाता है।

शैव दर्शन में शिव को अष्टमुर्ति पंचमहाभूत + आत्मा+ सूर्य+चन्द ⁄(5+1+1+1 =8) कहा गया है। ब्रह्मग्रंथी यह हठयोग की संज्ञा है तथा हठयोगानुसार ही संगीत रत्नाकर में नादोपति, नाद के प्रकार, नाद के पांच भेद इनका विवेचन हुआ है। विशुद्व ब्रह्म का सगुण स्वरूप ही 'शंकर' है, उसी की वन्दना 'नादब्रह्म' के रूप में की गई है। 'नादतनुं' विशेष या के प्रयोग से यह तथ्यसूचित होता है। निगुण उपासना तक पहुॅच पाने में 'सगुणोपासना' ही सोपान का काम करती है। इसलिए संगीत रत्नाकर में 'आहत नाद' का प्रतिपादन विस्तार से किया है।

पिण्डोत्पत्ति और योग दर्शन का प्रभाव

शारंगदेव आयुर्वेद के आर्चाय थे, इसलिए सं.र. के पहले अध्याय के अन्तर्गत पिण्डोत्पत्ति के प्रकरण में गर्भ में शिशु के आने से आरम्भ करके प्रत्येक मास में उसके वृद्वि और विकास से सम्बन्धित सभी अवस्थाओं के सहित 'जन्म' होने तक का संपूर्ण निरूपण वेदांतदर्शन के अनुसार किया गया है तथा गायकों के आवाज के गुण दोषों का ही वर्गीकरण आयुर्वेद के कफ, पित्त, वात इन त्रिदोशात्मक किया है। [3]

संगीत कि विवेचन करते हुए नादोत्पति की प्रयोगशाला 'देह'–शरीर होने के कारण 'देहस्य–भूतात्मकता' का वर्णन योग–दर्शन के 'जीव–ब्रह्म–जगत्' के संबंध तथा जीवोत्पति के निमित रूप से वर्णित है तथा योग के अनुसार दृष्टि को अवतरण क्रम, देहस्थ चेतना के केन्द्र बिन्दु के रूप में शट्चक्रांदिकों को विवेचन भी किया है, जो क्रमशः आत्मोद्वार के पथ का निर्देश करती है। [4]

संपूर्ण सृष्टि में उत्पत्तिभेद से पार्थिव जीवों को शरीर (स्वेदज, उद्भिज्ज, अण्डज और जरायुज जीवज) चार प्रकार का होता है। उक्त चतुर्विध शरीरों में स्वदेज शरीरों के अतिसूक्षमता के कारण उद्भिज्ज शरीरों की अचेतना के कारण, तथा अण्डज शरीरों में धातू नाड़ी आदि की असम्पूर्णता के कारण और जरायुज शरीरों के तिर्यक् योनि होने के कारण स्पष्ट उच्चारण शक्ति का अभाव रहता है। 5

मानवी शरीर को ही नाद के उपयुक्त समझकर मानव शरीर की उत्पत्ति के लिए ' पिण्डोत्पत्ति' का निरूपण संगीत रत्नाकर में सविस्तार किया गया है।

नाद की उत्पत्ति धारण और अनुभूति का आधार शरीर है। शरीर की इस महत्ता के कारण गर्भ में आने से लेकर जन्म होने तक की सब अवस्थाओं का पच्चप्राण, धातु, षट्चक्र तथा शरीर की अन्तः और बाह्यरचना का निरूपण करके इस प्रकार की देह से 'भुक्ति–मुक्ति' का साधन, ध्यान, धारणा, एकाग्रता आदि की दुष्करता, अनाहत नाद योगी को और 'आहत' नाद यह सुलभ, लोकरंजक और भवभंजक उपाय के द्वारा मोक्ष–उपासना का एकमात्र सरल साधन, संगीत को बताया है। 6

'योग' वह शक्ति है जिसके प्रभाव से यह जीवात्मा उस परमात्मा के साथ संयुक्त होता है। संगीत रत्नाकर में वर्णित बिन्दु, कला, मात्रा, काल , प्राण, बीजाक्षर, षट्चक्रों का विश्लेषण किया है, इस संज्ञाओं का अर्थ समझने के लिए 'योग' और 'तन्त्र' शास्त्र की सहायता लेनी पडती है। शरीर को 'गात्र वीणा' स्वरूप अधिष्ठान दिया है। शरीर में नादोत्पत्तिस्थान, नादोत्पत्ति की विधि, नाद–भेद, श्रुति संख्या बाईस होने का कारण इत्यादि का विश्लेषण योग दर्शन से प्रभावित है।

हठ योग दर्शन का प्रभाव

संगीत रत्नाकर में हठयोगानुसार 10 शरीरस्थ 'चेतनाकेन्द्र' वा चक्रों को विवेचन किया है, जिसमें संगीत के लिए आवश्यक तीन च्रक विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं–1 अनाहत चक्र 2. विशुद्वि चक्र 3. ललना चक्र। इन चक्रो के लिए विशिष्ट दलों से जीव के स्थित होने पर संगीत की सिद्वि अथवा नाश होता है, या संगीत के प्रति आकर्षण अथवा उदासीन भाव रहता है। अनाहत चक्र के बारह दल वाले चक्रम में केवल पहली, आंठवीं, ग्यारहवी और बाहरवीं पंखुडियों में रहनेवालो जीवा 'गीत' आदि में सिद्वि प्राप्त कर लेता है इसमे क्रमशः चंचलता का नाश, समता, विवके और अहंकार यह बारह फल होतें हैं। चतुर्थ, षष्ठ, और दशम दल पर जीव के रहने पर गीत आदि का नाश होता है। [7]

विशुद्व की आठवीं पंखुडी से आगे की पंखुडियों में जीव रहने पर गीत आदि की सिद्व प्राप्त होती है– सोलहवीं पंखुडी गीतादिनाशक होती है। ललना चक्र की दसवीं और ग्यारहवीं पंखुडी की सिद्वि करा देती है। इसी चक्र की पहली, चौथी और पांचवी पंखुडी गीत आदि का नाष करने वाली होती है। ब्रह्मरन्ध्र में स्थित जीव अमृत के रूप मे ंडूबे हुए की भॉति सन्तुष्ट हुआ गीतादि कार्यो का खुब अच्छी तरह से साध लेता है। ब्रह्मगन्थि मे बारह अरोंवाला नाभीच्रक है। जिस प्रकार मकडी तन्तुओं के जालें में भ्रमण करती है, उसी प्रकार यह जीव सुषुम्णा नाडी के द्वारा ब्रह्मरन्ध्रतक आरोह–अवरोहण करता है जैसा प्राण स्वरूप डोरी पर आरूढ 'जीव' 'नट' की तरह आरोह–अवरोहण करता है। गुरू के उपदेशानुसार मुनि लोग समुचित उपासना करके अपने अंतिर्द्रियशक्ति का विकास करके समाधीस्थ होते थे। अतः सांसारिक जनों के लिए यह साधना असंभवतः अप्राप्यही है। इसलिए आत्मोद्वार हेतु अनुरंजक और भवभंजक, संगीत साधना शास्त्र का मार्ग निःशुल्क शारंगदेवाचार्य ने बताया है। यह ग्रंथ उनके श्रेष्ठ दार्शनिक और संगीतशास्त्र के सार्वभौम विद्वत्ता का दिव्य प्रकाश है, जो आज भी अज्ञानरूपी अंधःकारमय साधकों को पथमार्ग प्रकाशित कर रहा है।

शोध प्राविधि

पुस्तकों एवं ग्रन्थों का पठन, वार्त्ता द्वारा, शोध पत्रों का अध्ययन।

निष्कर्ष

नादोपासाना का महत्व तथा समस्त मानसिक, बौद्विक, शरीरिक संघर्षों का अंत संगीत साधना के द्वारा होता है, इस तथ्य को शारंगदेव आचार्य ने दर्शन के सूत्रों का आधार लेकर प्रतिपादित किया है ।शारंगदेव की आधारभूत चिंतनशैली भी वेदान्त, योग, शैवागम, प्रत्यभिज्ञा, दर्शनों से विशेष प्रभावित है। इसका प्रमाण संगीत रत्नाकर में सुचारू रूप में मिलता है।

शांरगदेवाचार्य यह मूलतः कश्मीर के रहिवासी थे। कश्मीर के शैव–दार्शनिकों के लिए 'त्रिक शैव पंथ' यह विशेष संज्ञा है। अभिनवगुप्तपादाचार्य के शैवदर्शन के गुरू लक्ष्मीगुप्त और नाट्यशास्त्र के गुरू भट्टतोत थे तथा शारंगदेवाचार्य जी ने तो स्वयें अपने दादा से (भास्कर) और पिताजी से (सोढल) शैवदर्शन की परंपरा का अनुग्रह किया था।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *संगीत रत्नाकर 1/3/1चैतन्य सर्वभूतानांविवृत्तंजगदात्मना। नाद्ब्रह्म तद्दानन्द्मद्वितीयमुपास्महे ।।*
2. *संगीत रत्नाकर 1/2/2 'वचसा व्यवहारोयं नादाधीनमतोजगत्'।*
3. *संगीत रत्नाकर 120–167 (पिण्डोत्पत्ति प्रकरण)*
4. *संगीत रत्नाकर 1/1/111 अस्मद्विरचितेध्यात्मविवेक वीक्ष्यतांबुधैः।*
5. *संगीत रत्नाकर 2/3/56–71*
6. *संगीत रत्नाकर 1/2/16–17–तत्र नादोपयोगत्विान्मानुशं देहमुच्येत।*
7. *संगीत रत्नाकर 1/2/165–167*